स्कूलों की भाषा में जेंडर

आलोक कुमार मिश्रा

भाषा हमारे अस्तित्व में केन्द्रीय महत्त्व का विषय है। अपनी विविध भूमिकाओं में भाषा जहां संप्रेषण की बहुमुखी व्यवस्था है, वहीं चिंतन-मनन का माध्यम और सामाजीकरण का आधार भी है। भाषा जहां समाज और उसकी संरचना, उसमें निहित विविध अस्मिताओं से प्रभावित और निरूपित होती है वहीं स्वयं भाषा भी समाज को नये तरीके से रूपायित करने में भूमिका निभाती है। स्कूलों में एक विषय और माध्यम होने की अपनी द्वैध भूमिका से इतर भाषा संस्कृति में निहित मूल्यों, आदर्शों, वर्चस्व प्रतिरूपों आदि से जुड़ी होने के कारण न केवल इनको संचारित करती है अपितु इनसे बनती और इन्हें बनाती भी है। भाषा अपनी इस विस्तृत भूमिका के प्रमुख पक्ष के तौर पर लिंग संस्कृति को भी प्रकट करती है।

एन.सी.एफ. 2005 के शिक्षा में लैंगिक मुद्दे पर गठित राष्ट्रीय फोकस समूह के आधार पत्र में भाषा के विषय में स्पष्टतः कहा गया है कि, ''यह जानना बहुत रुचिकर है कि भाषा में जेंडर किस प्रकार कूटबद्ध है। अन्य प्रतिनिधित्व की तरह ही भाषाई प्रतिनिधित्व भी समाज में महिलाओं की स्थिति का परिचायक है। हमें अपने इस सामान्य सहजबोध पर प्रश्न करने की जरूरत है कि सभी सेक्स एक साझी भाषा के हिस्सेदार हैं। वर्तमान भाषा पितृसत्तात्मक और असमान शक्ति संबंधों से जुड़ी है। यदि भाषा इस तरह एक पक्षीय है तो इसे बदले जाने की जरूरत है।'' (2006, पृ 67, 68)। यदि शिक्षा को न्याय का दायरा बढ़ाने तथा सामाजिक अन्यायों का दायरा सिकोड़ने वाली प्रक्रिया माना जा रहा है तो ऐसे में जरूरी हो जाता है कि शिक्षा प्रक्रिया के तमाम तत्व (जिसमें भाषा महत्वपूर्ण है) ऐसा करने में मददगार हों। स्कूल सामाजीकरण के प्रमुख यंत्र के रूप में भाषा रूपी सांस्कृतिक औजार का प्रयोग किस तरह करते हैं, इसे जानना और समझना भी समाज के लिए जरूरी है। यही इस अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य है। मात्र भाषा की संरचना और स्वरूप का ही लोकतांत्रिक मूल्यों और समता आधारित जेंडर समावेशन से भरपूर होना ही काफी नहीं है अपितु उसके शिक्षण में भी इन मूल्यों का संचरण आवश्यक है। वर्तमान हिन्दी भाषा की पुस्तकें किस हद तक इस अपेक्षा पर खरी उतरती हैं यह देखना महत्वपूर्ण है।

भाषा मानव जीवन के हर आयाम तक विस्तृत है। इसे सीमित करते हुए हिन्दी विषय की एनसीईआरटी की कक्षा 6 से 8 की पाठ्यपुस्तकों 'बसंत' के अंतर्वस्तु विश्लेषण और कक्षा-कक्ष की शिक्षण प्रक्रिया में इसके संचरित होने वाले स्वरूप का अवलोकन मैंने जेंडर पहचान के संदर्भ में किया है। अंतर्वस्तु विश्लेषण को निम्न बिंदुओं या कोटियों के अंतर्गत संपन्न किया गया -

1) अंतर्वस्तु निर्माण और स्वरूप में लैंगिक प्रतिनिधित्व की स्थिति
2) पुरुषत्व एवं नारीत्व मॉडल का प्रस्तुतीकरण और तुलनात्मक स्थिति
3) चित्रों एवं प्रतीकों द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली जेंडर पहचान का स्वरूप
4) पुस्तकों की भाषा की व्याकरणीय संरचना में अंतर्निहित लिंगभेद या लिंग समता की पहचान

अध्ययन के दूसरे पक्ष जिसमें कक्षा-कक्ष की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में संचारित होने वाली भाषा का अवलोकन किया गया है, को निम्न बिंदुओं पर संपन्न किया गया है-

1) जेंडर संबंधी पाठ्यसामग्री का कक्षा-कक्ष में प्रयोग
2) कक्षा में जेंडर संबंधी मुद्दों पर शिक्षक/शिक्षिका का व्यवहार
3) जेंडर संबंधी मुद्दों पर विद्यार्थियों की प्रतिक्रिया व व्यवहार
4) जेंडर समता-विषमता से जुड़ी संवेदनशीलता/असंवेदनशीलता की स्थिति

इस अध्ययन को संपन्न करने के लिए जिन सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्यों को आधार बनाया गया है उनका चुनाव करते समय इस बात को ध्यान में रखा गया है कि वह भाषा व उसकी संरचना तथा उसके द्वारा निर्मित की जाने वाली लैंगिक अस्मिता को तार्किक तरीके से डिकोड या अर्थायित करे। इसके लिए मुख्यतः समाज भाषा-विज्ञान द्वारा प्रदत्त विश्लेषणों तथा इसके अंतर्गत नारीवादी-उत्तर संरचनावादी, उत्तर आधुनिकतावादी दृष्टिकोण को आधार बनाते हुए आलोचनात्मक सिद्धांत व अन्वेषण के तौर-तरीकों की मदद से अंतर्वस्तु विश्लेषण कार्य किया गया है। इससे पाठ (टैक्स्ट) में निहित प्रछन्न मूल्यों और सार संदेशों को जाना जा सकता है जो प्रकट मूल्यों की तरह ही महत्वपूर्ण और सामाजीकरण के मुख्य संवाहक होते हैं। अध्ययन का नतीजा चौंकाने वाला था।

अंतर्वस्तु विश्लेषण

(1) **अंतर्वस्तु की निर्माण प्रक्रिया और स्वरूप में लैंगिक प्रतिनिधित्व की स्थिति**- लोकतंत्र की ही तरह भाषा में भी प्रतिनिधित्व का सवाल बहुत महत्वपूर्ण है। यह बताता है कि किसके अनुभवों व विचारों को सामान्य बनाकर प्रस्तुत किया जा रहा है। हिन्दी पाठ्यपुस्तकों (बसंत, भाग 1, 2, 3) के विश्लेषण से निम्न स्थिति निकलकर आई-

- पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति में यदि लैंगिक प्रतिनिधित्व देखा जाए तो यह पुरुष वर्चस्व को प्रकट करती है। इसमें 75.6 प्रतिशत पुरुष हैं तो वहीं महिलाएं मात्र 21.95 प्रतिशत हैं। बाकी की पहचान अस्पष्ट है।
- पाठ्यपुस्तकों में शामिल अंतर्वस्तु की रचना करने वाले लेखक-लेखिकाओं या कवियों/कवयित्रियों की संख्या भी लगभग यही स्थिति दिखाती है। इसमें 76.47 प्रतिशत पुरुष और 17.64 प्रतिशत महिलाएं हैं। कुछ की पहचान यहां भी स्पष्ट नहीं है।
- अंतर्वस्तु में शामिल पात्रों की संख्या में पहले दो बिंदुओं के मुकाबले लैंगिक प्रतिनिधित्व कुछ बेहतर दिखता है पर है असमान ही। कुल पात्रों में 60.35 प्रतिशत पुरुष तो 33.13 प्रतिशत महिलाएं हैं। 6.5 प्रतिशत पात्रों की पहचान अस्पष्ट है। आंकड़े स्पष्ट रूप से यह दर्शाते हैं कि अंतर्वस्तु निर्माण एवं संयोजन में स्पष्ट लैंगिक विभेद है।

(2) **पुरुषत्व एवं नारीत्व मॉडल का प्रस्तुतीकरण और तुलनात्मक स्थिति** - अंतर्वस्तु विश्लेषण के अगले चरण में अध्ययन कर्ता द्वारा हिन्दी की पुस्तकों (बसंत) में शामिल लैंगिक मॉडल को जांचा गया है। इसमें भी कुछ बिंदुओं को आधार बनाया गया है जैसे- संवाद विश्लेषण (कौन बोल रहा है, कौन प्रभावशाली स्थिति में है आदि), भौतिक संपत्ति का मालिकाना किसके पक्ष में है, वस्तुओं या जीव जंतुओं के मानवीकरण में निहित लैंगिक पैटर्न आदि।

अध्ययन में यह बात निकलकर आई है कि यह पुस्तकें परम्परागत लैंगिक भूमिकाओं का ही अधिकतर मामलों में पुनरुत्पादन करती हैं।

कक्षा 6 के पाठ 'नादान दोस्त' में भाई और बहन की आपसी बातचीत हो या अभ्यास कार्य सभी में लड़की श्यामा को ही अज्ञानी, निम्नतर और भाई केशव को समझदार और उस पर हावी दिखाया गया है। जैसे- 'श्यामा कहती क्यों भैया, बच्चे निकलकर फुर्र से उड़ जाएंगे? केशव विद्वानों जैसा गर्व से बोला-नहीं री पगली पहले पर निकलेंगे।' (पृष्ट 13, बसंत) इसी पाठ की यह पंक्ति भी यही भाव उजागर करती है- 'श्यामा ने दिल में सोचा भैया कितना चालाक है।' (पृष्ट 15)

इन पुस्तकों में यह प्रवृत्ति अन्य पाठों में भी इसी मजबूती से दुहराई गई है। पाठ 'पार नजर के' (कक्षा 6, पृष्ठ 34,35) और 'अकबरी लोटा' (कक्षा 8, पृष्ठ 81) की अनाम और निर्भर औरतें हों या पाठ 'दादी मां' (कक्षा 7, पृष्ठ 7,8) और 'मिठाईवाला' (कक्षा 7, पृष्ठ 27,28) में निहित परदा प्रथा व स्त्रियों की घरेलू छवि सभी यही दुहराते हुए दिखाई देते हैं।

पाठ 'लाख की चूड़ियां' (कक्षा 8, पृष्ठ 6-10) औरतों की समाज में दोयम स्थिति को बिना प्रश्न उठाये आगे बढ़ाता है। जैसे यह संवाद- 'मैं उससे कहता कि शहर में सब कांच की चूड़ियां पहनते हैं तो वह उत्तर देता, 'शहर की बात और है, लला वहां तो औरतें अपने मरद का हाथ पकड़कर सड़कों पर घूमती भी हैं और फिर उनकी कलाइयां नाजुक होती हैं ना। लाख की चूड़ियां पहनें तो मोच न आ जाए।' (पृष्ट 7) इसी तरह कविता 'कठपुतली' (कक्षा 7, पृष्ट 14) में महिलाओं को कठपुतली के रूप में चित्रित किया गया है और उनकी स्वतंत्र होने के लिए जगी इच्छा पर उन्हीं द्वारा आश्चर्य जताने से कोई स्पष्ट संदेश नहीं निकलने की बजाय यथास्थितिवाद को बढ़ावा मिलता है। इस प्रकार पुस्तकों के पात्र नए बदलावों से परे पुराने अंदाज में ही परोसे गए हैं।

(3) **चित्रों-प्रतीकों में निहित जेंडर पहचान का स्वरूप** - चूड़ी, गहने, वैधव्य, पर्दा सभी कुछ अपने परंपरागत अर्थ में ही आए हैं। सार्वजनिक स्थलों को चित्रों में पुरुष क्षेत्र के रूप में ही चित्रित किया गया है। असमान लिंग प्रतिनिधित्व तो है ही। जैसे कविता- 'झांसी की रानी' (कक्षा 6) में कवयित्री ने जाने अनजाने चूड़ी को स्त्री की स्वभाविक पहचान व सौभाग्य से जोड़ दिया है-

'तीर चलाने वाले कर में उसे चूडियां कब भाई।
रानी विधवा हुई हाय विधि को भी नहीं दया आई।' (पृष्ठ 71, बसंत)

इसी तरह 'लाख की चूड़ियां' (कक्षा 8) पाठ का यह कथन कि 'गोरी-गोरी कलाइयों पर लाख की चूड़ियां बहुत फब रही थीं।' (पृष्ट 10) और 'पूरा जोड़ा बना लेने पर वह उसे बेलन पर चढ़ाकर कुछ पल चुपचाप देखता रहा। मानो वह बेलन न होकर नववधू की कलाई हो' (पृष्ट 6, बसंत) अपने-आप में गोरेपन के पक्ष में नस्लवादी से लगते हैं साथ ही युवतियों को घूरे और निहारे जाने योग्य मानने की संस्कृति को बढ़ावा देकर छेड़छाड़ जैसी घटनाओं को सामान्य बनाने को प्रोत्साहित करते हुए दिखते हैं।

किताबों में दी गई चित्रों की शृंखला भी प्रचलित पितृसत्तात्मक जेंडरबद्ध भूमिकाओं को स्वभाविक-प्राकृतिक सत्य के रूप में दर्शाती हुई प्रतीत होती हैं। पाठ- 'मिठाईवाला' में परदे की आड़ से सहमी हुई झांकती महिला रोहिणी का चित्र (कक्षा 7, पृष्ट 27) हो या पाठ- 'टिकट-अलबम' में कक्षा का चित्र जिसमें दो लड़कियों के अलावा सभी लड़के हैं (कक्षा 7, पृष्ट 60) सभी असमानता पूर्ण व भेदभाव परक लैंगिक स्थिति को बयां करते हैं। कक्षा 8 की हिन्दी पाठ्यपुस्तक 'बसंत' के पाठ- 'बस की यात्रा' (पृष्ट 15), 'क्यों निराश हुआ जाए' (पृष्ट 36, 37, 38), 'अकबरी लोटा' (पृष्ट 84), 'टोपी' (पृष्ट 118, 121) आदि के चित्र सार्वजनिक जगत को प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से पुरुष क्षेत्र के रूप में उद्‌घोषित करते हैं। जबकि इनमें महिलाएं लगभग शून्य हैं।

(4) **भाषा की व्याकरणीय संरचना में अंतर्निहित लिंगीय सत्ता** - इसमें मानवीकरण, एक शेष प्रक्रिया, पुलिंग-स्त्रीलिंगीय वर्चस्व आदि की परख की गई है।

कविता 'वह चिड़िया' (कक्षा 6, पृष्ट 1, 2) में चिड़िया को स्त्री रूप में वन पुरुष की सेवा में संलग्न दिखाया गया है। पाठ 'हिमालय की बेटियां' (कक्षा 7) में पितृसत्तात्मक संस्कृति में गौरवान्वित कन्यादान, बहुपत्नी प्रथा को उकेरा गया है। लोकगीत 'विदाई' (कक्षा 6) में लड़की का स्वयं को ही विवश, पराधीन मानना और अपनी तुलना पशु-पक्षी से करना कष्टप्रद दिखाई देता है। (पृष्ट 104) पुलिंग शब्दों में स्त्री लिंगीय पहचानों को समाहित मानकर चलने की प्रवृत्ति सभी किताबों में मजबूती से जमी हुई हैं। कई पाठों में आदमी शब्द में बार-बार औरतों को समाहित मान लिया गया है। जबकि औरत कहते हुए हर जगह सिर्फ औरतों को ही संबोधित किया गया है। पाठ- 'अक्षरों का महत्व' (कक्षा 6)

में समस्त मानव जाति के लिए आदमी शब्द का प्रयोग 12 बार किया गया है जबकि मानव शब्द का प्रयोग मात्र 5 बार। यहां भाषा की खोज में आदमी की भूमिका के वर्णन का बच्चों के मन में पुरुष की भूमिका के रूप में ही उतरने की संभावना अधिक है। जैसे- 'कोई दस हजार साल पहले आदमी ने गांवों को बसाना शुरू किया। वह खेती करने लगा। वह पत्थरों के औजारों का इस्तेमाल करता था।' (पृष्ट 29, कक्षा 6) महिलाएं पूरी प्रक्रिया में या तो अपने-आप समाहित मान ली गई हैं या अनुपस्थित। पुलिंग एक शेष की यह प्रक्रिया असमान लैंगिक प्रस्थिती को ही बयां करती है। इसी प्रकार स्त्री लिंगीय शब्दों को पुलिंग शब्दों से व्युत्पन्न दिखाना साथ ही तुलनात्मक रूप से कमजोर, निर्भर, छोटे रूप में चित्रित करना असमान पहचान को बढ़ावा देते हुए प्रतीत होते हैं। सभी उत्पादक कार्य जहां पुरुषों से जुड़े हैं वहीं घरेलू कार्य महिलाओं के लिए आरक्षित किए गए हैं।

कक्षा शिक्षण प्रक्रिया का अवलोकन

अध्ययन के दूसरे चरण में प्रेक्षण कार्य के लिए तीन विद्यालयों जिसमें एक सह शिक्षा, एक बालक और एक बालिका विद्यालय शामिल है, में उद्देश्य की सुविधा अनुसार पाठों के शिक्षण का काल चुना गया। इनमें पाठ- झांसी की रानी, मिठाईवाला और लाख की चूड़ियां शामिल थे।

अध्ययन में यह पाया गया कि अधिकांश समय शिक्षक/शिक्षिकाओं द्वारा सचेष्ट तरीके से समतापूर्ण जेंडर समावेशन का कोई अतिरिक्त प्रयास नहीं किया गया। सीमित या विषम जेंडर समावेशन वाली अंतर्वस्तु को बिना प्रश्न उठाये आगे बढ़ा दिया गया। इसके पीछे संभवतः जेंडर संवेदनशीलता के अनुरूप प्रशिक्षण की कमी भी कारण रही हो। उदाहरण के लिए कविता 'झांसी की रानी' में आए मर्दानी शब्द को जिस साहस और वीरता के द्योतक के रूप में प्रयोग किया गया है उसी अर्थ में कक्षा में भी चलते रहने दिया गया। जबकि आलोचनात्मक चेतना उत्पन्न करने का यहां अच्छा अवसर हो सकता था। पाठ 'मिठाईवाला' और 'लाख की चूड़ियां' के शिक्षण अवलोकन में भी कोई आलोचनात्मक चेतना उत्पन्न करने के अवसर पैदा करने वाले संदर्भ या अवसर कक्षा में नहीं दिखाई दिए।

प्राप्तियां और निष्कर्ष

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 और उससे जुड़े शिक्षा में लैंगिक मुद्दे पर गठित राष्ट्रीय फोकस ग्रुप का आधार पत्र 2006 दोनों ही शिक्षा में नये और वांछित बदलावों की सिद्धि के लिए पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों की भूमिका को बहुत अधिक महत्व देते हैं। वर्तमान में स्कूलों में पढ़ाई जा रही हिन्दी की एनसीईआरटी की कक्षा 6, 7 और 8 की पुस्तकें 'बसंत' अपने प्रारंभिक पृष्ठ 'शिक्षक से' में यह दावा भी करती हैं कि 'यह किताब राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के आधार पर तैयार किए गए पाठ्यक्रम पर आधारित है। यह पारंपरिक भाषा शिक्षण की कई सीमाओं से आगे जाती है।'

हिन्दी भाषा की इन पुस्तकों के विशलेषण से यह स्पष्ट होता है कि इन अपेक्षाओं और घोषणाओं पर यह किताबें खरी नहीं उतरती। जेंडर समावेशन का महत्वपूर्ण आयाम समतापूर्ण और न्यायपूर्ण लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व है जिसमें यह किताबें असफल रही हैं। पुरुष वर्चस्व की यह स्थिति सामान्यतः उनके ही अनुभवों को सामान्य सहज बनाकर प्रस्तुत करती है जो अंतर्वस्तु विश्लेषण में निकलकर आया है।

संवाद एवं संदर्भों के विशलेषण में यह भी निकला है कि पुरुषत्व और नारीत्व के जिस मॉडल को यह भाषाई पुस्तकें प्रस्तुत करती हैं वह असमानता व पितृसत्तात्मक मूल्यों को बढ़ावा देता हैं। इनमें पुरुषों को उत्पादक, स्वायत्त, मालिक, ज्ञानी, सार्वजनिक छवि के साथ तो महिलाओं को घरेलू, निर्भर, अधीन, अज्ञानी व पारिवारिक जैसी पंरपरागत भूमिका में ही अधिकांशतः दर्शाया गया है। अशिकांश चित्र व प्रतीक भी इसे ही दुहराते और पुष्ट करते हैं। भाषा की मूल प्रकृति और उसकी व्याकरणीय संरचना में ही लैंगिक विषमता व असमान समावेशन को देखा जा सकता है। जिसमें पुलिंग की स्त्रीलिंग पर श्रेष्ठता हर जगह दिखाई देती है। एकशेष प्रक्रिया में जहां स्त्रीलिंग का पुलिंग के अंदर ही

विलोपन हो जाता है वहीं कई स्त्रैण शब्दों को पुलिंग से ही व्युत्पन्न दिखाकर उन्हें कमतर दर्शाया जाता है। पुस्तकें इसी प्रक्रिया को बिना बदले या बिना प्रश्न उठाये आगे बढ़ाती हैं।

इस अंतर्वस्तु के कक्षाई प्रक्रिया में संचारित होने वाली स्थिति भी इसको ही आगे बढ़ाती है। बिना अतिरिक्त संवेदनशीलता दर्शाये या प्रश्न उठाये शिक्षक- शिक्षिकाएं ज्यादातर मामलों में अंतर्वस्तु को जैसा है उसी रूप में आगे बढ़ाते दिखाई दिए। भाषा के इस असमान समावेशन में एक बात और भी रेखांकित की जा सकती है और वह है स्त्री-पुरुष से इतर लैंगिग पहचान को पूरी तरह से अनुपस्थित ही रखा गया है। तीसरे लिंग और एलजीबीटी पहचान के लोकतांत्रिक समावेशन की मांग, आन्दोलन और सरकार-समाज द्वारा इसे मान्यता दिए जाने के इस युग में इनकी अनुपस्थिति व इनको लेकर पूर्ण चुप्पी और भी गलत है। लैंगिक समावेशन की यह असमान स्थिति बदली ही जानी चाहिए। ◆

लेखक परिचय : दिल्ली विश्वविद्यालय से एम ए (राजनीति विज्ञान), एम एड, एम फिल (शिक्षाशास्त्र) वर्तमान में दिल्ली के सरकारी विद्यालय में सामाजिक विज्ञान के शिक्षक के रूप में कार्यरत।

संपर्क : 9818455879; alokkumardu@gmail.com

संदर्भ सूची

1. अनामिका (2013), 'स्वाधीनता का स्त्री पक्ष', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
2. आर्या साधना एवं अन्य (2001), 'नारी राजनीति : संघर्ष एवं मुद्दे', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
3. एप्पल एम डब्ल्यू और बीन, ए (2000), 'लोकतांत्रिक स्कूलः कक्षा से सीखे सबकः, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
4. एनसीईआरटी (2006), 'राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005', एनसीईआरटी, नई दिल्ली।
5. एनसीईआरटी (2006), 'शिक्षा में लैंगिक मुद्दे पर आधार पत्र, 2006', एनसीईआरटी, नई दिल्ली।
6. कुमार कृष्ण (2004), 'बच्चे की भाषा और अध्यापक', नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
7. कुमार कृष्ण (2014), 'चूड़ी बाजार में लड़की', ग्रंथशिल्पी, दिल्ली।
8. कुमार रवीन्द्र (2013), 'समान्तर दृष्टि की राह (रचनात्मक एवं वैचारिक परिदृश्य का स्त्री विवेक), यश पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
9. गुटेक गेराल्ड एल (2009), 'न्यू पर्सपेक्टिव आफ फिलॉसफी एन्ड एजूकेशन', पियर्सन पब्लिकेशन्स।
10. दुबे लीला (2012), 'लिंग भाव का मानव वैज्ञानिक अन्वेषणः प्रतिच्छेदी क्षेत्र, ग्रंथशिल्पी प्रकाशन, नई दिल्ली।
11. भसीन कमला (2004), 'भला यह जेंडर क्या है?', जागोरी प्रकाशन, नई दिल्ली।
12. मिश्रा दयानिधि और सिंह दिलीप (2012), 'भाषा, संस्कृति और लोक', वाणी प्रकाशन, दिल्ली।
13. सिंह सुधा (2008), 'ज्ञान का स्त्रीवादी पाठ', ग्रंथशिल्पी प्रकाशन, नई दिल्ली।
14. सिंह दिलीप (2011), 'भाषा का संसार', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।